राजगच्छीय धर्मघोषवंशीय श्रीहरिकलशयति-विरचिता

मेदपाटदेश-तीर्थमाला

सं० म० विनयसागर

जिनेश्वरों के कल्याणकों से पवित्रित तीर्थ भूमि हो, चाहे अतिशय क्षेत्र हो और चाहे जिनमन्दिर हो, उनकी यात्रा करने की अभिलाषा सभी लोगों को होती है। तीर्थों की यात्रा कर भावोल्लसित होकर भक्तगण उस तीर्थस्थान की भूमि को जिनेश्वरों से पवित्र होने के कारण स्पर्श कर अपने जीवन को धन्य मानते हैं। तीर्थस्थ मन्दिरों में जिनबिम्बों की अर्चना, पूजा और प्रवर्द्धमान भावों से स्तवना कर, शुद्ध पुण्य भावों को अर्जित कर कर्म निर्जरा भी करते हैं। उच्चतम पद प्राप्त करने का बन्धन भी बाँधते हैं।

पूर्व समय में तीर्थयात्रा की सुविधा सबके लिए सम्भव नहीं थी, क्योंकि कण्टकाकीर्ण और बीहड़ मार्ग में उपद्रवों का भय रहता था, लूटपाट का भय रहता था। अतः किसी भव्य संघपति के संघ में ही लोग सम्मिलित होकर तीर्थयात्रा किया करते थे जो जीवन में प्रायः कर एक-दो बार ही सम्भव हो पाती थी।

जैनाचार्यों और जैनमुनियों ने बंगाल, बिहार, उड़ीसा, आसाम, महाराष्ट्र, आन्ध्रप्रदेश आदि क्षेत्रों में स्थित तीर्थों की यात्रा कर अपने जीवन को सफल भी किया था। जिनवर्धनसूरि और जयसागरोपाध्याय आदि से लेकर १९वीं शताब्दी तक अनेकों ने तीर्थमालाएँ भी लिखी हैं। शत्रुञ्जय, गिरनार, आबू, खम्भात, सूरत आदि की स्वतन्त्र तीर्थमालाएँ भी मिलती हैं। इन तीर्थमालाओं में तीर्थों का पूर्ण वर्णन करते हुए तत्रस्थ जिनमन्दिरों की संख्या भी प्राप्त होती है। कई-कई तीर्थमालाओं में क्षेत्रों की दूरियाँ भी लिखी गई हैं और कई में मन्दिरों के अतिरिक्त बिम्बों की संख्या भी लिखी गई हैं। इस तीर्थमाला में केवल भारत के एक प्रदेश का हिस्सा मेदपाटदेश (मेवाड़) की तीर्थमाला लिखी गई है। इसी तीर्थमाला में वर्णित विषय का आगे विश्लेषण किया जाएगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रणेता - इस कृति के निर्माता हरिकलश यति हैं। हरिकलश यति के सम्बन्ध में कोई भी ज्ञातव्य जानकारी प्राप्त नहीं है। इस कृति में स्वयं को राजगच्छीय बतलाते हुए धर्मघोषसूरि के वंश में बतलाया है। राजगच्छ की परम्परा में धर्मसूरिजी हुए हैं। यही धर्मसूरि धर्मघोषसूरि के नाम से प्रसिद्ध हुए। इनका समय १२वीं शती हैं। इन्हीं धर्मघोषसूरि से राजगच्छ धर्मघोषगच्छ के नाम से प्रसिद्ध हुआ। शाकम्भरी नरेश विग्रहराज चौहान और अर्णोराज आदि धर्मघोषसूरि के परम भक्त थे। यहाँ कवि ने धर्मघोषगच्छ का उल्लेख न कर स्वयं को धर्मघोषसूरि का वंशज बतलाया है। संभव है कि हरिकलश के समय तक यह गच्छ के नाम से प्रसिद्ध नहीं हुआ हो! इसी परम्परा के अन्य पट्टधर आचार्य का भी उल्लेख नहीं किया है।

रचना समय - प्रणेता ने रचना समय का उल्लेख नहीं किया हन्। साथ ही इस तीर्थमाला में धुलेवा - केसरियानाथजी एवं महाराणा कुम्भकर्ण के समय में निर्मित विश्वप्रसिद्ध राणकपुर तीर्थ का भी उल्लेख नहीं किया है। अतः अनुमान कर सकते हैं कि इस कृति का रचना समय सुरत्राण अल्लाउद्दीन के द्वारा चित्तौड़ नष्ट (विक्रम संवत् १३६०) करने के पूर्व का होना चाहिए। श्लोक १४ में 'दुर्गे श्रीचित्रकूटे वनविपिनझरन्निर्झराद्युच्चशाले, कीर्तिस्तम्भाम्बुकुण्डद्रुमसरलसरोनिम्नगासेतुरम्ये' लिखा है। इसमें कीर्तिस्तम्भ का उल्लेख होने से महाराणा कुम्भकर्ण द्वारा निर्मापित कीर्तिस्तम्भ न समझकर जैन कीर्तिस्तम्भ ग्रहण करना चाहिए जो १३-१४वीं शती का है। महाराणा कुम्भकर्ण का राज्यकाल विक्रम संवत् १४९० से लेकर १५२५ तक का है। इमें ईडर को भी मेवाड़ राज्य के अन्तर्गत लिखा है, ईडर पर अधिकार १३-१४वीं शताब्दी में ही हुआ था। दूसरी बात इन स्थानों पर विशाल-विशाल ध्वजकलश मण्डित और शिखरबद्ध अनेकों जिनमन्दिरों का उल्लेख यह स्पष्ट ध्वनित करता है कि यह रचना चित्तौड़-ध्वंस के पूर्व की है। अतः मेरा मानना यह है कि इस कृति की रचना १४वीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही हुई है।

हरिकलश यति संस्कृत साहित्य, छन्दःसाहित्य और चित्रकाव्यों का प्रौढ़ विद्वान् था। व्याकरण पर भी इसका पूर्णाधिपत्य दृष्टिगत होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस स्तव में इनके प्रौढ़ पाण्डित्य के साथ लालित्य, माधुर्य और प्रसाद गुण भी प्राप्त हैं ।

नामकरण एवं तीर्थपरिचय - मेदपाट अर्थात् मेवाड़ देश के तीर्थस्वरूप जिन-मन्दिरों की यात्रा एवं वन्दना होने से इस स्तव का नाम भी मेदपाट देश तीर्थमाला रखा गया है । इस तीर्थमाला का परिचय इस प्रकार है :-

१. कवि ने प्रथम पद्य में चौवीस तीर्थङ्करों को नमस्कार कर देखे हुए तीर्थों की तीर्थमाला में वन्दना की है ।

२. इसमें 'वामेय' शब्द स्वस्तिक चित्र गर्भित पार्श्वनाथ की स्तुति की है ।

३. इसमें नागह्रद (वर्तमान में नागदा) स्थित नवखण्डा पार्श्वनाथ के मन्दिर का वर्णन किया है । साथ ही कवि नागह्रद में ११ जैन मन्दिरों का उल्लेख भी करता है जिनमें शान्तिनाथ और महावीर आदि के मन्दिर मुख्य हैं । जिनमन्दिर में वाग्देवी अर्थात् सरस्वती देवी की मूर्ति का भी कवि उल्लेख करता है ।

४. इसमें देवकुलपाटक (वर्तमान में देलवाड़ा) में हेमदण्डकलशयुक्त चौवीस (चौवीस देवकुलिकाओं से युक्त) तीन मन्दिरों का वर्णन करता है, जिसमें श्री महावीर, ऋषभदेव और शान्तिनाथ के मन्दिर हैं । यहाँ कवि कहता है कि भगवान् शान्तिनाथ गुरुधर्मसूरि द्वारा भी वन्दित हैं अर्थात् उनके द्वारा प्रतिष्ठित है ।

५. इसमें आघाटपुर (वर्तमान में आहाड़) जल कुण्डों से सुशोभित हैं; विद्याविलास का स्थान है और जो माकन्द, प्रियाल, चम्पक, जपा और पाटला के पुष्पों से संकुलित है । वहाँ १० जिनमन्दिर हैं । जिनमें पार्श्वनाथ, आदिदेव, महावीर के मुख्य हैं ।

६. इसमें प्रारम्भ के दो अक्षर पढ़ने में नहीं आ रहे हैं । सम्भवतः ईशपल्लीपुर (वर्तमान में ईसवाल) में विद्यमान विक्रम् संवत् ३०० की अत्यन्त पुरातन श्री आदिनाथ प्रतिमा को निरन्तर नमस्कार करता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७. इसमें मज्जापद्र (मजावड़ा) विषम पर्वतों से घिरा हुआ है । यहाँ ५२ जिनालय से मण्डित प्रशस्त चैत्य है । मूलनायक श्री पार्श्वनाथ भगवान हैं । और खागहड़ी में अनेक बिम्बों से युक्त शान्तिनाथ भगवान को नमस्कार करता है ।

८. इसमें पद्राटक (बड़ौदा/बाँसवाड़ा) ग्राम में श्रेष्ठतम महावीर स्वामी का मन्दिर है, चौवीस मण्डपिकाओं से युक्त स्वर्णवर्णी पार्श्वनाथ विराजमान हैं । दूसरा मन्दिर भी पार्श्वनाथ का है । उसमें भी विराजमान समस्त जिनेश्वरों को कवि नमस्कार करता है ।

९. इस पद्य में मत्स्येन्द्रपुर (वर्तमान में मचीन्द) में विराजमान, पार्श्वनाथ, शान्तिनाथ आदि जिनवरों को नमस्कार करता है और श्यामवर्णी पार्श्वनाथ को नमस्कार करता है ।

१०. इस पद्य में पहाड़ो में मध्य में कपिलवाटक (सम्भवतः केलवाड़ा) को कवि ने राजधानी बताया है । सम्भव है राज्यों के उथल-पुथल में इसको राजधानी बनाया गया हो अथवा कुम्भलगढ़ को समृद्ध करने के पूर्व इसको राजधानी के रूप में माना हो । इस कपिलवाटक में उत्तुङ्ग तोरणों से युक्त पाँच जिनालय हैं, जिनमें नेमिनाथ, पार्श्वनाथ आदि मुख्य हैं । उन सबको कवि ने प्रणाम किया है ।

११. वैराट अपरनाम वर्द्धनपुर (बदनोर) ऊंचें पहाड़ियों के मध्य में बसा हुआ है । यहाँ तेरह जिनमन्दिर तोरणों से शोभायमान हैं और उनमें आदिनाथादि प्रमुख मूलनायक हैं । पर्वतों के मध्य में ही खदूरोतु (?)में पार्श्वनाथ का जिनमन्दिर हैं ।

१२. १२वें पद्य में माण्डिल (माण्डल) ग्राम का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि यहाँ पर जिनेश्वरों के पाँच मन्दिर हैं, जिसमें नेमिनाथादि मूलनायक प्रमुख हैं । शान्तिनाथ भगवान की मूर्ति आठ हाथ ऊँची है ।

१३. तेरहवें पद्य में प्रज्ञाराजी मण्डल (माण्डलगढ़) के दुर्ग पर ऋषभदेव और चन्द्रप्रभ के मन्दिर हैं । तथा विन्ध्यपल्ली (बिजौलिया) में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शान्तिनाथ, पार्श्वनाथ महावीर स्वामी के मुख्य मन्दिर हैं ।

१४. इस पद्य में चित्रकूट (चित्तौड़) दुर्ग का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि जहाँ झरने बह रहे हैं, उच्च कीर्तिस्तम्भ है, जलकुण्ड है, नदी बहती है, पुल भी बँधा हुआ है । उस चित्तौड़ में सोमचिन्तामणि के नाम से प्रसिद्ध चिन्तामणि पार्श्वनाथ का विशाल मन्दिर है । साथ ही ऋषभदेव आदि के २२ मन्दिर और हैं जिनको मैं नमस्कार करता हूँ ।

१५. पद्य १५ में करहेटक (करेडा) में विस्तीर्ण स्थान पर तीन मण्डप वाला चौवीस भगवानों के देहरियों से युक्त मन्दिर है । साथ ही ७२ जिनालयों से युक्त जिनेन्द्रों को मैं नमस्कार करता हूँ ।

१६. १६वें पद्य में कवि स्थानों का नाम देता हुआ – सालेर (सालेरा), जहाजपुर मण्डल, चित्रकूट दुर्ग, वारीपुर ( ), थाणक (थाणा), चङ्गिका (चंगेड़ी), विराटदुर्ग (बदनोर), वणहेडक (बनेड़ा), घासक (घासा) आदि स्थानों में स्थापित जिनवरों को नमस्कार करता है ।

१७. इसमें दर्भौकसी (डभोक) ग्राम में विराजमान देवेन्द्रों से पूजित युगादि जिनेश को कवि प्रणाम करता है ।

१८. इस पद्य में अणीहृद (?)में विराजमान अधिष्ठायक पार्श्वदेव के द्वारा सेवित पार्श्वनाथ को और नीलवर्णी हरिप्रपूजित नेमिनाथ को नमस्कार करता है ।

१९. नचेपुर (?)में आठ जिनमन्दिर हैं । वे तोरण, ध्वजा आदि से सुशोभित हैं । वर्द्धमान स्वामी प्रतिमा पित्तल परिकर की है । श्रीचन्द्रप्रभ, वासुपूज्य, ऋषभदेव और शान्तिनाथ आदि मूलनायकों जो कि सात जिनमन्दिरों में विराजमान हैं उनको नमस्कार करता है।

२०. २०वें पद्य में उच्च डुंगरों से घिरा हुआ और अजेय डूंगहपुर (डूंगरपुर) और महाराजा कुमारपाल द्वारा निर्मापित ईडरपुर में ऋषभदेव भगवान को तथा तलहट्टिका में विद्यमान समग्र चैत्यों को कवि नमस्कार करता है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१. पद्य २१ में तारण (तारङ्गा) में कुमारपाल द्वारा निर्मित अजितनाथ भगवान के मन्दिर में श्री धर्मसूरि द्वारा संस्थापित जिनेश्वरों को वन्दन करता है। इसी प्रकार आरास (आरासण-कुम्भारिया), पोसीन (पोसीना), देवेरिका (दिवेर), चैत्र (?) चङ्गापुर (चाङ्ग) आदि में विराजमान जिनेन्द्रों को भी नमस्कार करता है।

२२. यह मेदपाट देश जो कि चारों तरफ पर्वतों से आच्छादित है, उसके मध्य भाग में गाँव-गाँव में विशाल-विशाल अनेक तीर्थंकरों के देव मन्दिर हैं। जो कि ध्वजा पताकाओं और कलशों से शोभित है। इनमें से कई मन्दिरों को मैंने देखा है और कई मन्दिरों को मैं नहीं देख पाया हूँ। उन सब जिनेश्वरों को सम्यक्त्व की वृद्धि के लिए मैं नमस्कार करता हूँ।

२३. देश-देश में, नगर-नगर में और ग्राम-ग्राम में जो भी अचल जिनमन्दिर हैं, जिनके मैंने दर्शन किए हैं या नहीं किए हैं उन सब छोटे-बड़े मन्दिरों को मैं नित्य ही वन्दन करता हूँ। साथ ही देव और मनुष्यों द्वारा वन्दित तीन लोक में स्थित शाश्वत या अशाश्वत समस्त तीर्थङ्करों को मैं नमस्कार करता हूँ।

२४. इस प्रकार राजगच्छ में उदयगिरि पर सूर्य के समान श्रीधर्मघोषसूरि की वंशपरम्परा में हरिकलश यति ने भक्तिपूर्वक तीर्थयात्रा करके अपने नित्यस्मरण के लिए और पुण्य की वृद्धि के लिए प्रमुदित हृदय से तीर्थमाला द्वारा स्तवना की है।

इसमें कवि ने जिन-जिन स्थानों का नामोल्लेख किया है उनमें से कतिपय स्थानों के जो आज नाम हैं वे मैंने कोष्ठक में दिए हैं। अन्य स्थलों के नामों के लिए शोध-विद्वानों से यह अपेक्षा है कि वे वर्तमान नाम लिखने की कृपा करें।

कवि हरिकलश यति व्याकरण, काव्य, अलङ्कार शास्त्र, छन्दों का तो विद्वान् था ही साथ ही २०वें-२१वें पद्य को देखते हुए यह कह सकते हैं कि वह राग-रागनियों का भी अच्छा जानकार था। इस स्तव माला में प्रयुक्त छन्दों की तालिका इस प्रकार है :-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भुजङ्गप्रयात-१,१२,१७; अनुष्टुब्-२; शार्दूलविक्रीडित-३,४,५, ११,१५,१९; इन्द्रवंशा-६; स्रग्धरा-७,८,१४,२२,२४; आर्या-९; वसन्ततिलका-१०,१६; १३वाँ पद्य अस्पष्ट है; उपजाति - १८; १९वाँ -२०वाँ कड़खा राग में गीयमान देशी-'भावधरी धन्यदिन आज सफलो गिणुं' में है और २३वाँ पद्य मन्दाक्रान्ता छन्द में है ।

इस तीर्थमाला स्तव की प्रति राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर के संग्रहालय में ग्रन्थाङ्क २२७२८ पर विद्यमान है । लम्बाई चौड़ाई २१ x ८.५ सेंटीमीटर है । लेखनकाल अनुमानतः १६वीं शताब्दी है । लेखन प्रशस्ति नहीं है । पत्र संख्या २ है । प्रथम पत्र के प्रथम भाग पर और द्वितीय पत्र के प्रथम भाग पर स्वस्तिक चित्र भी अंकित हैं । जिसमें श्लोक संख्या २ और १७ के अक्षरों का लेखन है । पत्रों के हांसिए में पद्य संख्या ९ और पद्य संख्या १३ भिन्न लिपि में लिखित हैं । कई अक्षर अस्पष्ट हैं। पद्य ६ के प्रारम्भ के दो अक्षर अस्पष्ट हैं ।

जहाँ केसरियानाथ (कालियाबाबा) और राणकपुर जैसे विश्वप्रसिद्ध तीर्थस्थान हों, जहाँ श्रीजगच्चन्द्रसूरि जैसे आचार्यों को तपाबिरुद मिला हो अर्थात् जहाँ से तपागच्छनाम-प्रारम्भ हुआ हो, जहाँ खरतरगच्छ की पिप्पलक शाखा के जिनवर्द्धनसूरि, जिनचन्द्रसूरि, जिनसागरसूरि का चारों ओर बोल-बाला हो, जहाँ महोपाध्याय मेघविजयजी का प्रमुख विचरणस्थल रहा हो, जहाँ नौलखागोत्रीय रामदेव और राष्ट्रभक्त महाराणा प्रताप के अनन्य साथी दानवीर भामाशाह जैसे जिस राज्य में वित्तमन्त्री रहे हों । जहाँ अधिकारी वर्ग में जैन मन्त्रियों में देवीचन्द्र महेता से लेकर भागवतसिंह महेता रहे हों, जहाँ बलवन्तसिंह मेहता जैसे स्वतन्त्रता सेनानी रहे हों और पुरातत्त्वाचार्य जिनविजयजी जैसे इस भूमि की उपज हों उस मेवाड़ प्रदेश की जैसी प्रसिद्धि जैन समाज में होनी चाहिए वैसी नहीं रही ।

लीजिए, अब पठन के साथ भावपूर्वक तीर्थवन्दना कीजिए :-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मेदपाटदेश - तीर्थमाला

श्रीजिनेन्द्रेभ्यो नमः ॥

चतुर्विंशतिं तीर्थनाथान् प्रणम्य, स्वयं दृष्टतीर्थस्मृतेर्जातहर्षात् ।
विचिन्त्य स्वचित्ते महापुण्यलाभं, स्तुवे तीर्थमालां विशालां रसालाम् ॥१॥

सश्रीदै(कै?)रसुरैः सेव्यः सवासवसुरैर्नरैः ।
स मे यच्छतु नैर्मल्यं संयमाराधने जिनाः ॥२॥

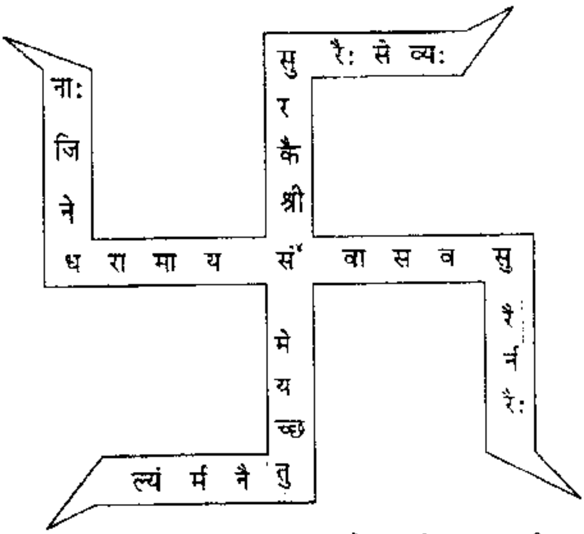

श्रीवामेय इति नामगर्भः स्वस्तिकः ॥

आदौ सम्प्रति राजकीर्तननथो (मथो) **नागह्लदे**शार्चितं ।
स्वप्नात् श्रीनवखण्डनामविदितं श्रीपार्श्वनाथं जिनम् ॥
वाग्देवीं च जिनेन्द्रदिव्यभवनेष्वेकादशस्वन्वहं,
शान्त्यादीश्वरवीरमुख्यजिनपान् वन्दे त्रिकालं त्रिधा ॥३॥

श्रीमद्**देवकुला**दिवा(पा?)टकपुरे रम्ये चतुर्विंशति-
प्रासादैर्वरहेमदण्डकलशैः सद्बिम्बपूर्णान्तरैः ।
श्रीवीरं ऋषभादिकान् जिनवरांस्तीर्थावतारानपि,
श्रीशान्तिं गुरुधर्मसूरिविनुतं वन्दे सदा सुप्रभम् ॥४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आघाटे जलकुण्डमण्डितपदे विद्याविलासास्पदे,
माकन्दालि-प्रियाल-चम्पक-जपा-सत्पाटलासङ्कुले ॥
वामेयादिजिनालयेषु दशसु श्रीआदिदेवादिकान्,
वीरान्तान् जिननायकाननुदिनं नौमि त्रिसन्ध्यं मुदा ॥५॥

....शताद् विक्रमवत्सरे स्थितं, श्रीईशपल्लीपुरभिश्चेलासेनं (? चेलासनम्)
श्रीआदिदेवं बहुभिश्चिरन्तनै-र्बिम्बैः समेतं प्रणमामि सन्ततम् ॥६॥

मज्जापद्रे विषमगिरिभिर्दुर्गमे ग्रामवर्ये
द्वापञ्चाशद्वरजिनगृहैर्वेष्टिते चारुचैत्ये ।
श्रीवामेयं प्रमुदितमना नौमि सर्वैर्जिनेन्द्रैः
श्रीमत्शान्तिं बहुजिनयुतं ग्रामके **खागहड्याम्** ॥७॥

ग्रामे **पद्राटकाह्वे** वरजिनभवने स्वामिनं वर्द्धमानं,
स्वर्णाभं पार्श्वदेवं त्रिगुणवसुजिनै-२४र्मण्डितं तोरणस्थैः ।
नत्वा चान्यैर्जिनेन्द्रैः परिधिपरिगतैः शोभमानं सुभक्त्या
नित्यं चैत्ये द्वितीये जिनततिसहितं पार्श्वनाथं नवीमि ॥८॥

मत्स्येन्द्रपुरे पार्श्वं शान्त्यादीशादि बहुजिनान् वन्दे ।
पंकिल डभरशामलदलोपम...तुरे ? वीरम् ॥९॥ (?)

गिर्यन्तरे **कपिलवाटक**राजधान्यां,
प्रोद्भासिराजभवनोत्सवशोभितायाम् ।
प्रोत्तुङ्ग-पञ्च-जिनवेश्मसु नेमिपार्श्व-
मुख्यान् जिनान् प्रतिदिनं प्रणमामि सर्वान् ॥१०॥

वैराटापरनाम्नि **वर्धन**पुरे तुङ्गाद्रिपुण्यार्हतां,
सैकद्वादशदेवमन्दिरमहैर्विभ्राजिते नित्यशः ।
श्रीआदीशजिनादिबिम्बनिवहं वन्दामि, भक्त्या ततो,
मन्दारी **खदुरोतु**देवसदने वामेयमुख्यान् जिनान् ॥११॥

पुरे पञ्चदेवालयश्रीजिनेन्द्रान् सदा नौमि नेमीश-मुख्यानशेषान् ।
पुरे **माण्डल**ग्रामवासं जिनौघं सरूपाष्टहस्तोन्नतं शान्तिदेवम् ॥१२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रज्ञाराजिमण्डलकरे दुर्गे रम्ये
युगादीश-चन्द्रप्रभौ शान्ति-पार्श्वम्
महावीरमुखार्हतो नौमि सर्वान्
एव स्नात्रदृश्च जिनं **विन्ध्यपल्याम्** ॥१३॥(?)

दुर्गे **श्रीचित्रकूटे** वनविपिनझरन्निर्झराद्युच्चशाले,
कीर्तिस्तम्भाम्बुकुण्डद्रुमसरलसरोनिम्नगासेतुरम्ये ।
पार्श्वं श्री**सोमचिन्तामणि**मपरजिनान्नौमि नाभेयमुख्या-
नेवं द्वाविंशतौ श्रीजिनपतिभवनेष्वेकचित्तः समग्रान् ॥१४॥

स्थाने **श्रीकरहेटके** जिनगृहे श्रीसम्प्रतीये पुरा,
विस्तीर्णे वसुवेददेवकुलिकाकीर्णे त्रिभूमण्डपे ।
रम्ये गर्भगृहालयस्थजिनपै२४र्वेदद्विसंख्यैः सदा,
वामेयं सहितं द्विसप्ततिजिनैरेवं मुदा नौम्यहम् ॥१५॥

सालेर-जाजपुर-मण्डल-चित्रकूट-दुर्गेषु **वारिपुर-थाणक-चङ्गिकासु** ।
वि(वै)राटदुर्ग-चणहेडक-घांसकादौ संस्थापितान् जिनवरान् गुरुभिः प्रणौमि ॥१६॥

प्रमोदास्पदं मुक्तिदं नाथमेकं, प्रजाभासि **दर्भौकसि** ग्रामरम्ये ।
प्रणम्रामरेशं युगादिं जिनेशं, प्रमादापहं भावतोऽहं नमामि ॥१७॥

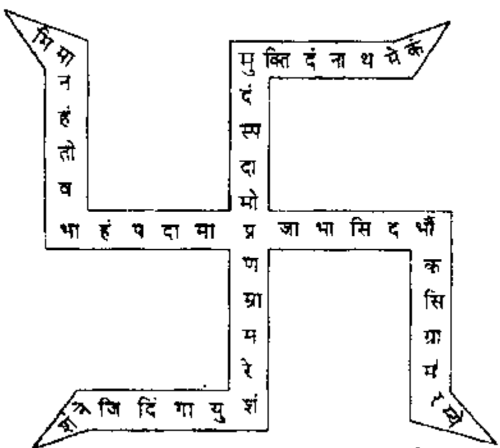

प्रथमजिनेतिगुप्तनामा स्वस्तिकः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणीहृदे शान्तरसामृतं ह्रदं, पार्श्वं जिनं पार्श्वसुरेण सेवितम् ।
हरिप्रपूज्यं हरिनीलदेहं, नित्यं स्तुवे नित्यपदे निवासिनम् ॥१८॥
नाम्नार्थेन च यापुरे वसुनौ(?) श्रीवर्धमानोदये,
देवार्यं वरपित्तलापरिकरं सत्तोरणोद्भासितम् ।
श्रीचन्द्रप्रभ[वासुपूज्य–वृषभ]श्रीशान्तिमुख्यानहं,
सप्त श्रीजिनमन्दिरेषु सततं संस्तौमि सर्वार्हतः ॥१९॥
अथ च **डुङ्गहपुरादजय**दुर्गावके, शैलवलये स्तुवे घट्टसीमां जिनान् ।
ऋषभ**मीडर**पुरे कुमरजिनमन्दिरे, नौमि तलहट्टिकासर्वचैत्यानि च ॥२०॥
तारणेऽजितजिनं **कुमर**चैत्ये स्थिरं स्थापिते धर्मसूरिभिरहं संस्तुवे ।
एव**मारास-पौसीन-देवेरिका-चैत्रभावाद्रिचङ्ग**पुरादौ जिनान् ॥२१॥
देशेऽस्मिन् मेदपाटे गिरिवरनिकटैः सङ्कुले मध्यभागे,
ग्रामे-ग्रामे विशाला बहुजिनकलिताः सन्ति मुख्या विहाराः ।
बाह्येप्येवं प्रभूता ध्वजकलशयुता भान्ति सर्वेषु तेषु,
दृष्टाऽदृष्टेषु नित्यं सकलजिनपतीन्नौम्यहं बोधिवृद्ध्यै ॥२२॥
देशे-देशे नगर-नगरे ग्राम-ग्रामेऽचलादौ,
प्रासादा ये नयनपथगास्तेषु चान्येषु नित्यम् ।
अर्चाः सर्वा गुरुलघुतराः स्तौमि तीर्थेश्वराणां,
त्रैलोक्यस्था सुरनरनताः शाश्वताऽशाश्वताश्च ॥२३॥
इत्थं **श्रीराजगच्छो**दयगिरितरणे**र्धर्मघोषस्य सूरे**-
र्वंशे जातः सुभक्त्या **हरिकलशयति**स्तीर्थयात्रां विधाय ।
नित्यं स्मृत्यै जिनानां विपुलतरलसद्भावपूर्णान्तरात्मा,
कांक्षन् पुण्यस्य वृद्धिं प्रमुदितमनसा तीर्थमालां स्तवीति ॥२४॥

इति श्रीमेदपाटदेशतीर्थमालास्तवनम् ॥

निदेशक
प्राकृत भारती अकादमी
१३-ए, मेन मालवीय नगर
जयपुर-३०२०१७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org